International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182, Print ISSN: 2349-5979, Impact Factor: RJIF 5.72
www.allsubjectjournal.com
Volume 3; Issue 6; June 2016; Page No. 361-365

कबीर वाणी से मधुशाला तक जीवन दृष्टिकोण

Dr. Rafik

Extension Assistant Prof., Department of Hindi-Govt. College Nagina, Mewat, Haryana, India

सारांश
हिन्दी साहित्य जगत में अद्वितीय स्थान रखने वाले कबीर का नाम संत कवियों में अपितु, हिन्दी–साहित्य जगत में बेजोड़ है। यद्यपि कबीर जी ने ''मसि कागद छुयै नहिं, कमल नहिं हाथ'' यह सत्य है कि कबीर जी ज्यादा पढ़े–लिखे नहीं थे किन्तु उनके द्वारा कही गई वाणी को उनके अनुयायियों व शिष्यों द्वारा संकलित किया गया है। उनकी वाणी से अनंत बातें कही गई है। जिस प्रकार वनस्पति में जितने पत्रा एवं गंगा में जितने बालु उठा है, कबीर द्वारा भी अपनी मुख से उतना ही कहा गया है। हरिवंशराय बच्चन का सम्पूर्ण जीवन ही काव्यमय रहा है। उनका मानना है कि कविता हृदय की वस्तु है, बुद्धि की नहीं। जो भावना से उद्वेलित होकर रचा जाता है वही 'साहित्य' कहलाता है। भावानाओं को व्यक्तिगत सीमाओं से स्वतंत्रा करने के लिए ही कविता लिखी जाती है।[1] ''जैसा मैं हूँ वैसी ही मेरी अभिव्यक्ति है। मैं यह कहने नहीं जाता कि मैं दूसरों से कितना भिन्न हूँ, कितना उनके समान हूँ, मैंने जीवन में क्या अपनाया है, क्या छोड़ा है, कैसा मेरा रहन–सहन है, बोल–चाल है, बात व्यावहार है, क्या मेरे श्रेय–प्रेय हैं, जो मेरे चारो तरफ है उनसे मैं क्या पाना चाहता हूँ, उनसे अपने किन विचार भावों का आदान–प्रदान करना चाहता हूँ। अंग्रेजी में कहना चाहूँगा 'आई लीव धेम'। मैं यह सब बर्तता हूँ, इन सब चीजों का सम्मिलित नाम है मेरी अभिव्यक्ति। यदि मैं इस समाज के बीच अपने लिए कोई अभिरूचि जगा सका हूँ तो मेरी अभिव्यक्ति भी जगाए।''[2]

मुख्य शब्द : कबीर वाणी, मधुशाला, जीवन दृष्टिकोण

प्रस्तावना
कबीर पंथी लोग कबीर को 'परतत्व' मानते हैं, वे अन्धकार में भटकते हुए प्राणियों का मार्गदर्शन करते आये हैं। उनके मुख से कही हुई वाणी आमजनों के लिये प्रेरणास्पद व मार्गदर्शक रहे हैं। कबीर की वाणी के सम्बन्ध में माता प्रसाद गुप्त ने कहा है– ''कबीर वाणी के दो सर्वाधिक प्राचीन और सुरक्षित पाठों का यथेश्ट रूप से न तो मूल्यांकन हुआ ही हुआ था और न ही कबीर–वाणी का संदेश स्पष्ट करने में उपयोग ही हुआ था।''[3]

मृदु भावों के अंगूरों की
आज बना लाया हाला,
प्रियतम, अपने ही हाथों से
आज पिलाऊंगा प्याला,
पहले भोग लगा लूं तेरा
फिर प्रसाद जग पाएगा;
सबसे पहले तेरा स्वागत
करती मेरी मधुशाला।

मदिरालय जाने को घर से
चलता है पीने वाला,
'किस पथ से जाऊं?' असमंजस
में है वह भोला भाला,
अलग अलग पथ बतलाते सब,
पर मैं यह बतलाता हूं —
'राह पकड़ तू एक चलाचल,
पा जाएगा मधुशाला'

कबीर का दर्शन आध्यात्म है जो परम सत्ता को केन्द्रित करता है। कबीर स्वतः यह स्वीकार करते है कि उनके गीत को साधारण गीत न समझे क्योंकि उसमें उन्होंने अपना 'ब्रम्ह विचार' और 'आत्म साधन' अर्थात् अपना दर्शन प्रस्तुत किया है वे कहते हैं –

'तुम्ह जित चांनौं गीत है यहु निज ब्रम्ह विचार।
केवल कहि समुझाया आतम साधन सार रे।'

'दर्शन' के अनेक अंग उपांग होते हैं। तत्व मीमांसा उसका प्रमुख अंग है। जिसमें जीव, जगत तथा ईश्वर और उसके बीच के पारस्परिक सम्बन्धों की मीमांसा की जाती है। उनके दर्शन अनेक रूपों में दिखलाई देते हैं।कबीर का ब्रह्म–दर्शन–कबीर का ब्रह्म निर्गुण, निराकरा, अजन्मा, अचिंत्य अत्यंक्त और अलक्ष्य है। उन्होंने कहा कि जो जन्म या अवतार धारण करता है वह उनका ब्रह्म नहीं है। एक स्थान उन्होंने अपने साहब को स्पष्ट करने के लिये पुराण प्रतिपादित अनेक अवतारों का उल्लेख कर यह बतलाया है कि उनका साहब इनमें से एक भी नहीं है। यह ब्रह्म रूपी परमसत्ता का

कोई एक स्थान नहीं है यह तो सर्वत्रा है। उनकी ब्रह्म रूप की अभिव्यक्ति उनकी कविताओं में दिखलाई देती है–

'जेते पत्रा वनसपती, औ गंगा की रैन।
पंडित बिचारा क्या कहै, कबीर कही मुख बैन।'
''नां जसरथ घरि औतरि आवा। नां लंका का राव सताया।।
देवै कोखि न औतरि आवा। नां जसवै लै गोद खेलावा।।
नां वो ग्वालन कै संगि फिरिया। गोबर धन ले नां कर धरिया।।
बांवन होई नहीं बलि छलिया। धरनी बेद लै न ऊधारिया।।''[4]

यहाँ उन्होंने व्यवहारिक दृष्टि से परमात्मा के अनेक अवतार के नामों का उल्लेख किया है। उन्होंने अवतारों के कई नाम विष्णु, कृष्ण, गोविन्द, राम, माधव, मधुसूदन, बनवारी, नरहरि, बिट्ठल, केशव चिन्तामणि, शिव आदि नामों का उपयोग उन्होंने अपने आराध्य के लिये किया है। इतना ही नहीं उन्होंने इस्लामी स्रोत से भी नाम ग्रहण कर लिये जैसे अल्लाह, खुदा, रहीम, रब, खसम, पैगम्बर, हुजूर आदि। बच्चन का मानना है कि जीवन अनुभतियों के ऊपर आधारित है। जीवन की अनुभतियाँ जब बहुत तीव्रतम हो जाती हैं तब ऐसा लगता है कि उसे अभिव्यक्ति देनी चाहिए। रचनाएं भी जीवन के व्यक्तिगत अनुभवों के माध्यम से ही लिखी जाती हैं। अनुभवों की प्रतिक्रिया मन और मस्तिष्क को आलोकित करती है। जब यह अनुभूति कवि को व्याकुल कर देती है तब वह अपनी काव्य–सृजन की क्षमा के अनुसार रचना करता है। मंजिल प्राप्त करने के लिए भी हमें एक रास्ता चुनना होगा। फिर बच्चन जी ने यहाँ यह भी कहा है कि हम चाहे जो भी रास्ता पकड़लें वो हमारी मंजिल खुद–ब–खुद बना देगा। उन्होंने जो समाज में फैली हुई विडंबना है और वो है आज हिन्दू और मुसलमान दो मजहब। जो कि दोनों आपस में अपने–अपने मजहब को बड़ा बता कर आपस में लड़–झगड़ रहे हैं। आज जो धर्म के नाम पर हो रहा है। उस पर भी इन्होंने अपनी लेखनी के माध्यम से करारी चोट की है। उन्होंने कहा है कि यहाँ किस प्रकार से धर्म के नाम आये दिन दंगे फसाद होते हैं। फिर भी उनका एक ही ईश्वर है। एक ही मजहब है और वो है इंसानियत का–

''धर्म–ग्रंथ सब जला चुकी है
जिसके अन्तर की ज्वाला
मंदिर मस्जिद गिरजे सबको
तोड़ चुका जो मतवाला ।
पंडित, मोमिन, पादरियों के
फंदो को जो काट चुका
कर सकती है आज उसी का
स्वागत मेरी मधुशाला।''[2]

कबीर का अनुपम तत्व ऐसा है कि उसके मुँह माथा कुछ नहीं है, न वह रूपवान है, न कुरूप, वह पुश्पवास से भी अधिक सूक्ष्म है –

''जाके मुंह माथा नहीं, नाहीं रूप कुरूप।
पुहुप वास तैपातरा, ऐसा तत्व अनुप।।''[5]

कबीर का आत्मदर्शन –'आत्मा' के सच्चे रूप को पहचान कर कबीर जी ने उसका वर्णन किया है। उनका मानना है यदि कोई अपनेपन की पहचान कर अपना मन उलट ले तो उसे विभिन्न दुःखों से छुटकारा मिल जाये, क्योंकि मन की गति उलट देने पर वह सनातन हो जाता है। उसकी कुछ पंक्तियाँ देखिए–

'आपा जाति उलटे आप। तौ नहिं ब्यापै तीन्यूं ताप।
अब मन उलएि सनातन छूबा। तब जांनां जन जीवत मूवा।'

हरिवंशराय ने जो भी तर्क दिए हैं वो हाला, प्याला और मधुशाला के माध्यम से दिए हैं और उन्हीं को जीवन पर भी चरित्राार्थ भी किया है। मधुशाला में बच्चन ने लगभग पूरे जीवन को ही निहीत कर डाला है। कहीं कहता है कि उठो और अपनी मंजिल के लिए निकल पड़ों मगर कुछ हरिवंश राय जी ने जो भी तर्क दिए हैं वो हाला, प्याला और मधुशाला के माध्यम से दिए हैं और उन्हीं को जीवन पर भी चरित्राार्थ भी किया है। मधुशाला में बच्चन जी ने लगभग पूरे जीवन को ही निहीत कर डाला है। मधुशाला में उन्होंने अपने कवि होने का परिचय दिया है । उनको मंजिल पाने के लिए प्रेरित करती एक रूबाई–

''मदिरालय जाने को घर से
चलता है पीने वाला,
किस पथ से जाऊ? असमंजस,
में है वह भोला–भाला ।
अलग–अलग पथ बतलाते सब
पर मैं यह बतलाता हूँ–
राह पकड़ तू एक चला चल
पा जायेगा मधुशाला।''[2]

कबीर का मानना है आत्मा परम परमार्थ है– वह अनंत है, निर्गुण है, सर्वव्यापी तत्व है। वह सभी भी समाहित है।

'अकल निरंजन सकल सरीरा।
त मन सौ मिलि रहा कबीरा।।'

आत्मा तथा ब्रह्म की एकता– कबीर आत्मा और ब्रह्म में भेद नहीं मानते। वे दोनों को समान भाव से देखते हैं, वे दोनों का संबंध बूँद और समुद्र के समान आत्मा और ब्रह्म का मानते हैं –

'हेरत हेरत हे सखी, रहा कबीर हिराइ।
बूंद समानों समुंद मैं, सो कत हेरी जाइ।।'

कहने का अभिप्राय है जैसे जलाशय में पड़े हुए घड़े के बाहर, भीतर पानी रहता है और जब घड़ा फूटता है तब उसके अंदर का पानी बाहर के पानी से मिल जाता है, ठीक उसी प्रकार शरीर के न रहने पर आत्मा–परमात्मा एक हो जाते हैं। –

'जल में कुंभ–कुंभ में जल है बाहरि–भीतरि पानी।
फूटा कुंभ जल जलहिं समानां यह तत कथौ गियानी।।'

बच्चन ने अपने प्रेम प्रसंग को भी भलिभांति से उभारा है। हम कह सकते है कि कवि यहाँ पर श्रंगार रस के बारे में बताना चाहता है–

''अधरों पर हो कोई भी रस
जिह्वा पर लगती हाला
भाजन हो कोई भी हाथों में
लगता रक्खा है प्याला ।
हर सूरत साकी की सूरत
में परिवर्तित हो जाती
आंखों के आगे हो कुछ भी
आंखों में है मधुशाला।''

कवि यह भी बताना चाहता है कि ये धर्म और जात–पात तो हमारे मन का वहम् है। यदि हम कहीं बाहर मिलते हैं तो हमें ये नही पता होता कि ये हिन्दू है या फिर मुसलमान। हिन्दू और मुसलमानों की जो आपस में शत्रुता हैं अर्थात जो एक–दूसरे से बढ़कर अपने धर्म को बतलाते हैं। मंदिर और मस्जिद जो कि इस झगड़े का कारण होते हैं। यदि उन से बाहर निकल कर देखा जाए तो ना कोई हिन्दू है और ना ही कोई मुसलमान है। अर्थात सभी को एक समान ही दिखाने का प्रयास कवि ने अपनी इस रूबाई के माध्यम से किया है–

''मुसलमान औ हिन्दू हैं दो
एक, मगर उनका प्याला
एक मगर उनका मदिरालय
एक मगर उनकी हाला ।
दोनों रहते एक न जब तक
मस्जिद–मंदिर में जाते
बैर बढ़ाते मस्जिद–मंदिर
मेल कराती मधुशाला।''

कबीर की अद्वैत भावना जैसे निष्ठापूर्ण चित्राण कबीर में मिलता है, वैसा अन्यत्रा मिलना मुश्किल है, उनका अपना अनुभव है–

'सहजे–सहजे सब गए, सुत बित कामिति काम।
एकमेक होइ मिलि रहा, दास कबीरा राम।।'

कबीर का माया दर्शन–भारतीय तत्व–चिन्तन में मायावाद की परम्परा बड़ी पुरानी है। केवल न्यासवेराशिक, विशिष्टद्वैतवाद आदि दर्शनों को छोड़कर भारत देश भी दर्शनों में चाहे वह आत्मवादी हो या अनात्मवादी, मायावाद का विशिष्ट स्थान है। वेदों में रूप बदलते ही क्रिया को माया कहा गया है। [6]
वह यह नहीं समझता कि हम सभी एक हैं। इंसान आपस में झगड़ रहा है और अपने अंदर विष घोल रहा है। उसी के आधार पर कवि कहता है कि आज जो आपस के बैर से हलाहल पैदा हो रहा है। उसको किसी न किसी को पीना होगा। अपनी लेखनी के माध्यम से कवि कहना चाहता है कि आज चाहे जितनी भी घृणा कोई कर ले मगर जो सच्चाई है उसका सामना तो एक न एक दिन हर किसी को करना ही है। वह देखिए–

''आज करे परहेज जगत, पर
कल पीनी होगी हाला
आज करे इनकार जगत, पर
कल पीना होगा प्याला ।
होने दो पैदा मद का महमूद
जगत में कोई फिर
जहां अभी है मंदिर–मस्जिद
वहां बनेगी मधुशाला ।''

कवि आलसी वर्ग अर्थात जो कामकाजी युवक हैं जो कि अपने आज के कार्य को कल पर करने का काम करते हैं। कल पर छोड़ते रहते हैं। हमें हमेशा अपने आज पर ही विश्वास रखना चाहिए और हर काम जो हमें आज करना है उसे कल पर बिल्कुल भी नही छोड़ना चाहिए। अर्थात कवि समाज में आशावादी विचारों को जागृत कर युवा वर्ग के अन्दर उत्साह भर उन्हें अपने कार्य के प्रति सजग कर उन्हें प्रेरित करने का कार्य करता है।

''कल–कल पर विश्वास किया कब
करता है पीने वाला
हो सकते कल कर जड़ जिनसे
फिर–फिर आज उठा प्याला।
आज हाथ में था, वह खोया
कल का कौन भरोसा है ।
कल की हो न मुझे मधुशाला
काल कुटिल की मधुशाला।''

कबीर का मायावाद उपनिषद, गीता तथा शंकराचार्य के मायावाद से ही प्रभावित है। इसमें किसी अन्य वाद का प्रभाव नहीं है। माया को कबीर ने कई नामों से पुकारा है– उसे उन्होंने डाइन, कामिनी, सर्पिणी आदि न जो कितने तिरस्कार सूचक नाम दिये हैं।

'माया की झलि जग जला, कनक कामिनी लागि।'

कबीर का प्रकृति दर्शन–संसार के भौतिक पदार्थों की उत्पत्ति अथवा उनका विकास आदि बातें प्रकृति दर्शन के अन्तर्गत आती है। यह विशाल अम्बर किस पर आधारित है यह कौन जान सकता है। कबीर ने इस चित्रामय नाना रूपतामक जगत की वास्तविक सत्ता नहीं मानी जाती है, बल्कि उसका चित्राकार अर्थात ब्रह्म को ही सच्चा मानना चाहिए।

'जिनि यहु चित्रा बनाइया, सो सांच सतधारा।
कहै कबीरते जनभले, चितवंताहि लेहि बिचारि।।

कबीर की रचनाओं में स्थान–स्थान पर सांख्य के विकास–क्रम का उल्लेख मिलता है। केवल कबीर ने ही नहीं, बल्कि हिन्दी के अधिकांश मध्यकालीन कवियों ने सांख्य का यह सृष्टि–विकास क्रम अपनाया है। [7]
कवि यह भी जानता है कि अपने प्रेम आदि के बारे में कोई जिक्र ना करे तो उसकी यह अपनी रचना ही अधूरी होगी। वह अपने शब्दों के माध्यम से किस प्रकार से अपनी प्रेमिका का रूप सौंदर्य को प्रदर्शित करना चाहता है–

''सुमुखि, तुम्हारा सुंदर मुख ही
मुझको कंचन का प्याला
छलक रही जिसमें माणिक–
रूप–मधुर–मादक–हाला
मैं ही साकी बनता, मैं ही
पीने वाला बनता हूँ।
जहां कहीं मिल बैठे हम–तुम
वहीं गई हो मधुशाला।''

कबीर का अपना दर्शन क्षेत्रा है और अपनी सुनिश्चित विचार धारा। शंकराचार्य का अद्वैतवाद उन्हें अधिकांश रूप से मान्य है। किन्तु एक स्वतंत्रा चिंतक की भाँति उन्होंने अन्य दर्शनों से भी उपयोगी तत्व लेकर अपने युग की आवश्यकता के अनुरूप उनसे जो कुछ लगा उपयोगी है ग्रहण कर लिया। आचार्य विनोबा भावे का कथन उपयुक्ती जान पड़ता है– हमारे संतों की पाचन शक्ति प्रखर होने के कारण सारे भिन्न–भिन्न दर्शन उनको विरोधी नहीं मालूम पड़ते, बल्कि इन सबमें वे एक साथ धाम कर लेते हैं। इतना अवश्य है कि कबीर जैसे महान संत की सूझ–बूझ निराली व अनोखा है। इनकी भाषा और अभिव्यक्ति तो उनकी निराली है जिनके मामध्य से सीधे–साधे शब्दों में कभी–कभी वे इतनी बड़ी–बात कर लेते है जिन्हें आसानी से समझना और फिर कहना कठिन सा हो जाता है। किन्तु उनकी भाषा इतनी सरल व सहज है कि ज्यादा पढ़ा लिखा न हो व्यक्ति तो भी आसानी से समझ सकता है। उन्होंने आमजनों तक अपनी वाणी से समाज उपयोगी बातें जन–जन तक पहुंचाकर व जीवन को सरस व सुखमय बनाने का सुखद प्रयत्न किया है।
प्रत्येक मनुष्य में विचारों का जन्म होता है । उन विचारों का मंथन होता है फिर स्वभवतया वह उन विचारों का अभिव्यक्त करना चाहता है । कुछ व्यक्ति बोलकर, सुनाकर व्यक्त कर देते है, तथा कुछ ऐसे होते हैं जो बता कर व्यक्त नही कर पाते । वे उन विचारों को शब्दों को मथते रहते है, उन पर चिंतन करते रहते हैं । मथते–मथते जब वे विचार पक जाते हैं, लावा बन जाते हैं तो वे कलम के माध्यम से कागज पर उतारने लगते हैं । वहाँ रचनाकार की रचना का जन्म होता है ।
उस विचार को मूर्त रूप देने के लिए चाहे वह कविता, कहानी, उपन्यास, निबंध, नाटक, लघुकथा आदि कुछ भी लिखे, वह उस विचार को अभिव्यक्त करेगी ।
प्रत्येक मनुश्य में संवेदनाएं उठती हैं । वह प्रकृति से प्यार करता है, परिवार से प्यार करता है, प्रेमिका के सपने संजोता है, देश पर कुर्बान होना चाहता है। अपनी रचनाओं के माध्यम से वह सब

करता है । अपनी रचनाओं के माध्यम से वह सब करता है ।
कभी–कभी उसे क्रोध, कुंठा, सन्त्रास, पीड़ा होती है तो उसे भी व्यक्त करता है या यूं कहिए कि वह एक प्रकार से अपने मन की भड़ास निकालता है, ओर सब करते–करते एक दिन उसे लगता है कि उसका दर्द, उसकी कुंठा बहुत छोटी है । समाज का दर्द उससे बड़ा है फिर वह
समाज के, देश के और मानवता के दर्द को पहचानने लगता है और आम आदमी का कवि बन जाता है । बच्चन जी और उनके कृतित्व पर उस समय के साहित्यकारों की अपनी–अपनी राय थी । सुमित्रा नन्दन पंत जी ने बच्चन की रचनाओं के बारे में कहा है– बच्चन मुख्यतः मानव–भावना, अनुभूति, प्राणों की ज्वाला तथा जीवन–संघर्श का आत्म–निश्ठ कवि हैं। मैंने कभी उसके लिए ठीक ही लिखा था–

अमृत ह्रदय में, गरल कंठ में, मधु अधरों में ।
आस तुम वीणा धर कर में जन–मन–मादन।।

समाज में जो धर्म के नाम पर मंदिर और मस्जिद बनी हुई हैं और जिनके आधार पर आज का मानव बंट चुका है और अपने आप को भूलकर अपनी मय में जीने का काम कार्य आज कर रहा है।
कई बार हम भाग्य के भरोसे बैठकर अपने नायाब समय को यू हीं बर्बाद करते रहते हैं। हम इसी आशा में रहते हैं कि हमारा भाग्य एक दिन अवश्य उदय होगा। हाथ–पांव ना हिलाते हुए हम आशावादी बने रहते हैं। अन्त में यह आशा ही हमें निराशा की तरफ ले जाती है। यहाँ पर कवि भाग्य को बड़ा बताता है। एक रूबाई के माध्यम से कवि यह समझाना चाहता है कि हम चाहे जितनी भी कोशिश कर लें पर हमारे भाग्य में जो होगा वही हमें प्राप्त होगा–

''लिखी भाग्य में जितनी बस
उतनी ही पाएगा हाला
लिखा भाग्य में जैसा बस
वैसा ही ही पाएगा प्याला,
लाख पटक तू हाथ–पांव, पर
इससे कब कुछ होने का
लिखी भाग्य में जो तेरे बस
वही मिलेगी मधुशाला।''

यह भी एक कवि का गुण होता है कि वह अपनी लेखनी के माध्यम से जो लिखता है। लोग उसको अपने जीवन में उतारने का प्रयास जरूर करते हैं चाहे वह उसको कुछ ही तवज्जो दें पर जीवन में उसका कुछ न कुछ हिस्सा जरूर उतार लेते हैं। दान देने वाली बात चाहे हमें पता ही क्यों ना हो पर जब तक कोई हमें उसके बारे में ना बता दे उस समय तक हमें दान देने के बारे में कोई जानकारी नही होती।
दान की महत्ता का रहस्य समझाते हुए कवि ने अपनी एक रूबाई के माध्यम से कहा है–

''कर ले, कर ले कंजूसी तू
मुझको देने में हाला
दे ले, दे ले तू मुझको बस
यह टूटा–फूटा प्याला ,
मैं तो सब्र इसी पर करता
तू पीछे पछताएगा ।
जब न रहूंगा मैं, तब मेरी
याद करेगी मधुशाला।''

घर से जब किसी व्यक्ति या विशेष की मृत्यु होती है तो उसका पूरा परिवार उसके शोक में डूब जाता है। उसके बारे कवि ने कहा है कि अंतिम समय जब शवयात्रा का समय होता है तो उस समय के दृश्य को किस प्रकार से अपनी लेखनी के माध्यम से उतारने का प्रयास किया है–

''मेरे शव पर वह रोए हो
जिसके आंसू में हाला
आह भरे वह, जो हो सुरभित
मदिरा पीकर मतवाला।
दें मुझको वे कंधा जिनके
पद मद–डगमग होते हों
और जलूं उस ठौर, जहां पर
कभी रही हो मधुशाला।''

हर जगह जहाँ कही देखों कवि की गरीबी उसके आड़े आती है । वह अपने मन के भावों कुंठाओं को किस प्रकार से प्रकट करता है यह भी इनका ही गुण है । कवि कहता है कि मेरा मन यह भी मानने को तैयार नही कि दूसरों के धन खुशियों को छीनकर अपना भला चाहूं किस प्रकार से उन्होंने एक रूबाई के माध्यम से प्रकट किया है –

''नहीं चाहता, आगे बढ़कर
छीनूं औरों का प्याला
नही चाहता, धक्के देकर
छीनूं औरों का प्याला
साकी मेरी और न देखो
मुझको तनिक मलाल नही
इतना ही क्या कम आंखों से
देख रहा हूं मधुशाला।''

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कवि ने पूरी मधुशाला को ही पूरे जीवन पर आधारित कर रखा है। मधुशाला में जितनी भी रूबाईयां है। उनका प्रत्येक शब्द या यूं कहिए कि पूरी मधुशाला हम पर अर्थात समाज पर खरी उतरती है। इसमें हर भ्रष्टाचार भाग्य–अभाग्य और जीवन की पूरी कहानी को संजो कर रख दिया है। जन्म से लेकर मृत्यु तक आदि सभी क्रियाओं को भलिभांति से उकेरने का प्रयास किया है । यही एक सच्चे कवि का कार्य भी होता है कि वह जो लिखता है वह ऐसा लगे मानो समाज भी उसी का एक अंग है। वह समाज में बैठकर जो कर रहा है वह प्रत्यक्ष हो रहा है। ऐसा ही कवि बच्चन जी ने अपनी स्वरचित इस पुस्तक मधुशाला के माध्यम से समाज के सामने अपनी भावनाओं को ज्यों का त्यों रखा है। उन्होंने समाज की छोटी से छोटी बुराई को भी बड़ी ही आत्मियता से उभारने का प्रयास किया है और उसी अंदाज में उसका निराकरण करके समाज के सामने प्रस्तुत करते हैं । वह मनोरंजन के साथ–साथ समाज को शिक्षा प्रदान करने वाली रचना का विस्तार करता है।

संदर्भ

1. मधुशाला, श्रद्धांजलि संस्करण जनवरी 2003 हिन्द पॉकेट बुक्स प्रा.लि. जोरबाग लेन नई दिल्ली पृ. 2।
2. हरिवंशराय बच्चन, मधुशाला, पृ. 16, रूबाई नं. 06।
3. गुप्त, माता प्रसाद– रमैनी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक वाराणासी, संस्करण– 2000, पृ. 7।
4. तिवारी, पारसनाथ– कबीर का दर्शन, राका प्रकाशन 40 ए, मोतीलाल नेहरू रोड इलाहाबाद, संस्करण 2010, पृ. 36।

5. पयासी, आनन्द– कबीर देखो जग बौराना, पड़ाव प्रकाशन, प्रकाशन साहित्य परिषद, 46 एल आय जी नेहरू नगर, भोपाल, संस्करण 1998, पृ. 26।
6. सिंह, भगत– सबद, विश्वविद्यालय प्रकाशन चौक, वाराणसी, संस्करण 1997, पृ. 48।
7. पांडेय, संगमलाल– कबीर की वाणी, आर्य प्रकाशन, अजमेरी रोड, दिल्ली, संस्करण 1966, पृ. 48।